Education, Teachers and Teaching Focal Points of Social Upgradation

सामाजिक उन्नयन के केन्द्र बिन्दु शिक्षा, शिक्षक और शिक्षण

Dr. Devendra Singh Chamyal - Professor (Dr.) Bheema Manral

डॉ0 देवेन्द्र सिंह चम्याल[1] & प्रोफेसर (डॉ0) भीमा मनराल[2]

Faculty of Education, Soban Singh Jeena University, Campus Almora (Uttarakhand)

Dean and Head of Department, Faculty of Education, Soban Singh Jeena University, Campus Almora (Uttarakhand)

1–शिक्षा संकाय, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, परिसर अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)
2– संकायाध्यक्ष एवं विभागाध्यक्ष, शिक्षा संकाय, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, परिसर अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

साराँश– शिक्षा मानव जीवन के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षा **सामाजिक उन्नयन** का सबसे महत्वपूर्ण और सशक्त साधन है। डीवी के शब्दों में ''**शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो किसी भी समाज को प्रगति की ओर ले जा सकती है।**'' शिक्षा परिवर्तनों के मूल्यांकन में सहायता करती है। सामाजिक उन्नयन की दृष्टि से शिक्षक एक मित्र, पथ प्रदर्शक और दार्शनिक के रूप में बहुत महत्वपूर्ण व्यक्तित्व होता है। एक आदर्श शिक्षक को 'मनुष्यों का निर्माता', 'राष्ट्रपिता', 'शिक्षा पद्वति की आधारशिला', 'राष्ट्रनिर्माता', 'समाज को गति प्रदान करने वाला' आदि सब कुछ माना जाता है। शिक्षक ही लोगों के अन्दर व्याप्त अज्ञान के अंधकार को दूर कर उन्हें आने वाली बाधाओं को दूर कर उन्हें प्रगति पथ की नयी राह दिखाता है। कक्षा शिक्षण से जुड़ी सभी बातों के केन्द्र और परिधि बच्चे और शिक्षक ही होते हैं। इनमें होने वाली अंतःक्रियाएं ही शिक्षण को जीवंत और रोचक बनाती हैं। कौन सा बच्चा कैसे सीखता है, किस तरह की गतिविधियों में अधिक रूचि लेता है, कौन सी बातें हैं जो बच्चों को सीखने के लिए अधिक प्रेरित करती हैं, आदि बातों को शिक्षक से बेहतर और कौन समझ सकता है? यह प्रक्रियाएं जितनी प्रभावी, रोचक और नियोजित होंगी शिक्षण उतना ही सफल माना जाएगा। **हुमायुं कबीर** का मत है कि ''**शिक्षा पद्वति की कुशलता शिक्षकों की योग्यता पर निर्भर है, अच्छे शिक्षकों के अभाव में सर्वोत्तम शिक्षा पद्वति का भी असफल होना अवश्यम्भावी है। अच्छे शिक्षकों द्वारा शिक्षा पद्वति के दोषों को भी अधिकांशतः दूर किया जा सकता है।**''

मुख्य शब्द– सामाजिक, उन्नयन, शिक्षा, शिक्षक और शिक्षण।

प्रस्तावना– जिस प्रकार एक ओर शिक्षा बालक का सर्वांगीण विकास करके उसे तेजस्वी, बुद्विमान, चरित्रवान, विद्वान तथा वीर बनाती है, उसी प्रकार दूसरी ओर शिक्षा समाज की उन्नति के लिए भी एक

आवश्यक तथा शक्तिशाली साधन है। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढ़ी के बालकों को उच्च आदर्शों, आशाओं, आकांक्षाओं, विश्वासों तथा परम्पराओं आदि सांस्कृतिक सम्पत्ति को इस प्रकार से हस्तान्तरित करता है कि उनके हृदय में देश–प्रेम तथा त्याग की भावना प्रज्वलित हो जाती है, जिससे समाज भी निरन्तर उन्नति के शिखर पर चढ़ता ही रहेगा। इस प्रकार व्यक्ति तथा समाज दोंनों ही के विकास में शिक्षा परम आवश्यक है। **विवेकानन्द** जी के अनुसार **"शिक्षा मनुष्य के अन्दर सन्निहित पूर्णता का प्रदर्शन है"** शिक्षा व्यापक अर्थ में सामाजिक प्रक्रिया है। समाज से बाहर या समाज के प्रति कर्तव्यों से विमुख उसका कोई महत्व नहीं। प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में गुरू का स्थान सदैव सम्माननीय रहा है। गुरू की गरिमा का वर्णन गुरू गीता में इस प्रकार किया गया है।

गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णुः गुरूर्देवो महेश्वरः।
गुरूः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

अर्थात् गुरू में ही ब्रहमा, विष्णु और महेश का दर्शन होता है। वे स्वयं परब्रह्म परमेश्वर है। शिक्षक को अपना आचरण आदर्श रूप में रखना चाहिए क्योंकि विद्यार्थी हमेशा शिक्षक के व्यवहार की नकल करते हैं। अतीत से ही गुरू को समाज में अत्यन्त सम्मान प्राप्त था। राजा भी अपने आसन से उठकर गुरू को सम्मान देते थे। बड़े–बड़े राजमुकुट भी गुरू के चरणों में झुकने में गौरव की अनुभूति करते थे। प्राचीन काल में गुरू की विशालता व शिष्य की गुरू के प्रति प्रगाढ़ आस्था का दिग्दर्शन कई जगह होता था। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं– पुरूषोत्तम श्री राम ने लंका पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् अयोध्या लौटने पर अपने गुरू वशिष्ट को श्रेय व सम्मान देते हुए कहा, आप हमारे गुरूवर तथा हमारे कुल के देवता हैं। आपकी ही कृपा से युद्ध भूमि में राक्षसों का वध सम्भव हो सका है।

यूनान का बादशाह सिकंदर जब भारत को जीतने की उत्कट लालसा लिए अपने सेना के साथ आगे बढ़ रहा था, तो उसने अपने गुरू सुकरात से जानना चाहा था कि वे भारत से कौन सी वस्तु उपहार में लेना पसंद करेंगे। सिकन्दर का उत्तर इस बात की पुष्टि करता है कि गुरू को समाज में कितना सम्मान प्राप्त था, एवं प्राचीन काल में ज्ञान की किरणें भारत से ही विश्व में फैली थी।

'सिकन्दर ने कहा सुकरात से
क्या तुमको लाऊँगा।
विजय–डंका बजाकर हिन्द से
जब लौट आऊँगा।
कहा सुकरात ने राजन्।
विजय कर जब यहाँ आना।
हमारे वास्ते 'भारत' से
एक ज्ञानी गुरू लाना।'

शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ शिक्षक अध्यापन कार्य उत्साहपूर्वक करता है। शिक्षक का सामाजिक एवं संवेगात्मक रूप से संतुलित होना अनिवार्य है। एक शिक्षक को उज्जवल चरित्र, आशावादी दृष्टिकोण, नेतृत्व कुशलता, मित्रतापूर्ण व्यवहार, आदि वैयक्तिक गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए। शिक्षक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञाता होने के साथ–साथ, संप्रेषण की नवीनतम विधियों व तकनीक का भी ज्ञान होना आवश्यक है।

गुरू का शिक्षा दान एक सहज सामाजिक प्रक्रिया एवं स्वभावजन्य कार्य था। उसका उद्देश्य अर्थोपार्जन अथवा व्यवसाय कदापि नहीं था। लेकिन वर्तमान समय में शिक्षक अपने मौलिक दायित्वों से विमुख होकर व्यवसायोन्मुखी हो गया है और समस्त ध्यान धनोपार्जन पर है।

यह अत्याधिक चिंतन का विषय है कि शिक्षक को समाज में सम्मान बनाये रखना है तो साधारण परिस्थितियों में असाधारण कार्य करने की क्षमता विकसित करनी होगी। समाज के समक्ष **"My life is my message"** के रूप में उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे।

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षक के तीन गुण बताये हैं – (1) शास्त्र ज्ञान या विषय विशेषज्ञता (2) निष्पापता, हृदय, मन की पवित्रता, (3) धन, यश, स्वार्थ से रहित होना। **महर्षि अरविन्द के अनुसार– "शिक्षक राष्ट्र की बगिया के चतुर माली होते हैं। वे अपने संस्कारों की खाद से मानवीय संस्कृति का सृजन विद्यार्थियों में निरन्तर करते रहते हैं।" डीवी के अनुसार– "शिक्षक एक मार्गदर्शक और निर्देशक है। वह नाव का खेवनहार है, परन्तु नाव को आगे बढ़ाने वाली शक्ति सीखने वालों से ही प्राप्त करनी चाहिए"**।

शिक्षा और सामजिक परिवर्तन एवं सामाजिक उन्नयन में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। चूँकि शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है इसलिए यह समाज में होने वाले परिवर्तनों को स्वीकार करती हुई आगे बढ़ती है और बदलते हुए समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने में व्यक्ति की सहायता करती है। शिक्षा सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक उन्नयन का सबसे महत्वपूर्ण और सशक्त साधन है। **डॉ0 राधाकृष्णन** ने कहा कि, **"शिक्षा परिवर्तन का साधन है। जो कार्य साधारण समाज में परिवार, धर्म, सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है, वही आज शिक्षा संस्थाओं के द्वारा किया जाता है।**" शिक्षा के द्वारा ही हम समाज के लोगों के विचारों में बदलाव ला सकते हैं और समाज की उन्नति कर सकते हैं। **डीवी** के शब्दों में, **"शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो किसी भी समाज को प्रगति की ओर ले जा सकती है।**" ब्रवेकर के अनुसार सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से शिक्षा संस्थायें दो प्रकार का कार्य करते हैं। एक– यथास्थिति की आलोचना करना अर्थात् शिक्षा के माध्यम से लोगों को यह बताना कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में क्या दोष हैं और दोषों को दूर करने का क्या लाभ होगा तथा दूसरा सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रयास करना अर्थात् शिक्षा के माध्यम से नवीन परिवर्तनों के लिए भूमिका तैयार करना और लोगों को उन परिवर्तनों को स्वीकार करने के लिए तैयार करना। **कोठारी आयोग** ने भी इस बात पर बल दिया कि आज के युग में शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा शान्तिपूर्ण ढंग से व्यापक सामाजिक परिवर्तन लाये जा सकते है। उसके शब्दों में, "**यदि बिना किसी हिंसक क्रान्ति के बड़े पैमाने पर परिवर्तन करना है तो केवल एक ही साधन है जिसका प्रयोग किया जा सकता है और वह है शिक्षा। शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिवर्तनों के एक साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।**" इसी कारण हर विकासशील देश अपनी शैक्षिक व्यवस्था को अधिकाधिक कुशल, प्रभावी और योजनाबद्ध बनाने का प्रयास करती है। सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक उन्नयन हेतु शिक्षा निम्नलिखित कार्य करती है। –

- **परितर्वन के लिए मानसिक रूप से तैयार करना–** प्रायः यह देखा जाता है कि लोग किसी भी नये परिवर्तन को सहज ही स्वीकार करने को तैयार नहीं होते। उन्हें इस बात का भय सताये रहता है कि इस नये परिवर्तन को स्वीकार करने से उनका अहित न हो जाय। शिक्षा लोगों को नये परिवर्तन स्वीकार करने हेतु मानसिक रूप से तैयार करती है।

- **पूर्वग्रहों को बदलना और नवीनता की प्रेरणा देना–** समाज में कुछ लोग अत्यधिक रूढ़िवादी, अंधविश्वासी और पुरातन पन्थी होते हैं। उनके अपने पूर्वाग्रह होते हैं और वे उनसे टस से मस नहीं होना चाहते। शिक्षा उनके सोचने–विचारने के ढंग में परिवर्तन करती है, उनके पूर्वाग्रहों को दूर करती है और उनके अन्दर वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करती है जिससे ये आज के वैज्ञानिक, तकनीकी और प्रगतिशील युग में होने वाले परिवर्तनों का समर्थन कर सकें।

- **नवीन परिवर्तनों को प्रोत्साहित करना–** शिक्षा मनुष्य को चिन्तनशील प्राणी बनाती है। प्रत्येक परिस्थिति और प्रत्येक गहराई के साथ विचार करने की प्रेरणा देती है। संसार के विभिन्न देशों में होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप होने वाली प्रगति और विकास से परिचित कराती है। परिवर्तनों को स्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित करती है। इससे लोगों को प्रेरणा मिलती है।

- **परिवर्तन के मूल्यांकन में सहायता करना–** सामान्यतः समाज में होने वाले अधिकांश परिवर्तन प्रगतिशील होते हैं। ये समाज को आगे बढ़ाने में सहायता करते हैं लेकिन कतिपय परिवर्तन ऐसे भी होते हैं जो समाज को पीछे की ओर ले जाते हैं, जिनको स्वीकार करने से समाज की हानि हो सकती है। ऐसी स्थिति में शिक्षा ही लोगों में सामाजिक परिवर्तनों का मूल्यांकन करने की क्षमता उत्पन्न करती है और उन्हें इस योग्य बनाती है कि वे उनके गुणावगुण पर विचार कर सकें तथा यह निर्णय कर सकें कि कौन से परिवर्तन उनके लिए उपयोग होंगे और कौन से नहीं।

- **शाश्वत मूल्यों को स्थायी करना–** प्रत्येक समाज के कुछ शाश्वत मूल्य होते हैं जो इस समाज को स्थायित्व प्रदान करते हैं जो उस समाज की विशेषता समझे जाते हैं। **राल्फ लिटन** का कहना है कि जब कभी सामाजिक परिवर्तन के कारण इन मूल्यों में दुर्बलता आने लगती है तो समाज पतन की ओर अग्रसर होने लगता है। ऐसे समय में शिक्षा ही इन शाश्वत मूल्यों की रक्षा करती है और सामाजिक परिवर्तन के बुरे प्रभावों से बचाती है।

- **ज्ञान में वृद्धि करना–** परिवर्तन के लिए यह आवश्यक है कि हमारे ज्ञान में निरन्तर वृद्धि होती रहे। ज्ञान के विस्तार के द्वारा ही नवीन परिवर्तनों के विषय में जानकारी प्राप्त हो सकती है। शिक्षा के द्वारा नये–नये शोध किया जाना सम्भव होता है जिससे ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का विकास होता है। इस प्रकार ज्ञान में वृद्धि कर शिक्षा सामाजिक परिवर्तनों को प्रोत्साहित करती है।

- **संस्कृति का हस्तान्तरण ही नहीं उसमें परिवर्तन और सुधार करना –** शिक्षा के द्वारा समाज की संस्कृति का हस्तान्तरण नयी पीढ़ी को किया जाता है जिससे समाज में स्थायित्व और निरन्तरता आती है। लेकिन शिक्षा का कार्य मात्र संस्कृति का हस्तान्तरण ही नहीं है अपितु उसमें वांछनीय परिवर्तन और सुधार लाना भी है। इस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवर्तन की जन्मदाता, प्रवर्तक और निर्देशक है। स्थायित्व और निरन्तरता आती है। लेकिन शिक्षा का कार्य मात्र संस्कृति का हस्तान्तरण ही नहीं है, अपितु उसमें वांछनीय परिवर्तन और सुधार लाना भी है। इस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवर्तन की जन्मदाता, प्रवर्तक और निर्देशक है।

- **एकता तथा समग्रता उत्पन्न करना–** भारतवर्ष में जाति, वर्ण, सम्प्रदाय, धर्म, भाषा और प्रान्तवाद के आधार पर आए दिन संघर्ष होते रहते हैं, शिक्षा के माध्यम से इनको दूर किया जा सकता है एवं एकता और समग्रता की भावना पैदा की जा सकती है।

- **मानवीय तथा सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना करना–** आज के वैज्ञानिक, औद्योगिक और नगरीकरण के युग में मानवीय और सामाजिक सम्बन्धों के छिन्न–भिन्न होने की सम्भावना है। इस प्रगति और विकास ने मानवीय गुणों के प्रति लोगों को संवेदन शून्य बना दिया है। इस भौतिकवादी युग में हुये सामाजिक परिवर्तनों में मानवीय और सामाजिक सम्बन्धों की प्रस्थापना में सहयोग करने और लोगों को संवेदनशील बनाने में शिक्षा मदद करती है।

- **सामाजिक परिवर्तन में कुशल नेतृत्व प्रदान करने में सहायता करना–** स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान तिलक, महात्मा गाँधी, पंडित नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस, ने समाज को जो नेतृत्व दिया, परिवर्तन की जो प्रेरणा दी उसका सुखद परिणाम हुआ। किसी भी समाज के व्यक्ति कितने ही योग्य और प्रतिभावान क्यों न हों जब तक उनका पथ प्रदर्शन करने वाला कुशल नेतृत्व नहीं होगा, तब तक वे न सही निर्णय कर सकेंगे और कुशल नेतृत्व मिलते ही लोगों को सही दिशा

मिल जायेगी जिससे समाज में नये परिवर्तन हो सकेंगे। योग्य और कुशल नेतृत्व प्रदान करने में शिक्षा मदद करती है।

जब मूल्यों, आवश्यकताओं और प्रविधियों में परिवर्तन होने लगता है तो शिक्षा भी अपने आपको उन्हीं के अनुसार बना लेती है। सामाजिक परिवर्तनों के अनुसार शिक्षा के स्वरूप, उसके उद्देश्यों, उसके पाठयक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों आदि में परिवर्तन होता है। वास्तव में प्रत्येक समाज अपनी आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार ही अपनी शिक्षा की व्यवस्था करता है। जैसा समाज का स्वरूप होता है, वैसा ही शिक्षा का स्वरूप रहता है। यदि किसी कारण समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक या राजनैतिक परिस्थितियों में परिवर्तन आता है, जीवन मूल्यों में बदलाव आता है, जीवन के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन आता है तो उसी के अनुसार शिक्षा का स्वरूप भी बदल जाता है। निम्नलिखित तथ्यों के कारण शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का अनुसरण करती है –

- **सामाजिक शक्तियों के कारण शैक्षिक परिवर्तन–** प्रत्येक समाज की कुछ शक्तियाँ होती हैं जैसे समाज के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समूह, समाज के आदर्श और मूल्य, समाज की आवश्यकतायें और आकांक्षायें, समाज के आचरण और व्यवहार प्रतिमान आदि। जब किसी कारण से इन शक्तियों में परिवर्तन होता है तो शिक्षा में भी उनके अनुरूप परिवर्तन हो जाता है।
- **सामाजिक आवश्यकताओं के कारण शैक्षिक परिवर्तन–** प्रत्येक समाज की अपनी आवश्यकतायें होती हैं, उन्हीं के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। जैसे–जैसे समाज की आवश्यकताऐं बदलती जाती हैं, वैसे–वैसे वहाँ की शिक्षा में भी परिवर्तन आ जाता है। हमारे देश में आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। हमने प्रजातांत्रिक समाजवादी धर्मनिरपेक्ष गणराज्य की स्थापना की है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, विकलांगों की शिक्षा, अल्पसंख्यकों, निर्बल वर्गों, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के बालकों की शिक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध किये गये हैं।
- **सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण शैक्षिक परिवर्तन–** सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण भी शिक्षा के स्वरूप में परिवर्तन होते हैं जैसा कि **ओटावे** ने कहा है– **"शिक्षा सांस्कृतिक परिवर्तनों का अनुसरण करती है।"** संस्कृति के दो रूप होते हैं– एक भौतिक संस्कृति और दूसरी अभौतिक संस्कृति। पहले भौतिक संस्कृति में परिवर्तन होता है। उसके बाद अभौतिक संस्कृति में। जब भौतिक संस्कृति में परिवर्तन होता है तो उसे समायोजन करने के लिए शिक्षा में भी परिवर्तन हो जाते हैं। आज रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर आदि को शिक्षा का अंग बना दिया गया है।

आज के इस संक्रमण काल में शिक्षक ही लोगों के अन्दर व्याप्त अज्ञान के अंधकार को दूर कर उन्हें प्रगति पथ की नयी राह दिखा सकता है। वहीं परिवर्तनों के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करके नये परिवर्तनों में आस्था पैदा कर सकता है और नये परिवर्तनों को लाने में समाज का नेतृत्व भी कर सकता है। सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से शिक्षक एक मित्र, पथ प्रदर्शक और दार्शनिक के रूप में बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। समाज हित में शिक्षक की भूमिका के संदर्भ में कुछ मुख्य बातें इस प्रकार हैं –

1. शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन को सुनियोजित दिशा व गति प्रदान करनी चाहिए।
2. शिक्षक को प्रजातांत्रिक जीवन मार्ग अपनाना चाहिए एवं उसका व्यवहार निष्पक्ष होना चाहिए।
3. शिक्षक को समाज में व्याप्त संकीर्णता और पिछड़ेपन को दूर करके आदर्शों व मूल्यों की प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

4. शिक्षक को बालकों की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के कारण उनमें उच्चता और निम्नता की भावना को पनपने नहीं देना चाहिए।
5. शिक्षक को समाज की वैज्ञानिक, प्रौद्योगिक प्रगति व विकास में सक्रिय योगदान देना चाहिए।
6. शिक्षक को लोगों के मन से सांस्कृतिक जड़ता की भावना को दूर करके उन्हें नवीन परिवर्तन के लिए तैयार करना चाहिए।
7. शिक्षक बुद्धिजीवी होता है। उसे ज्ञान–विज्ञान के विविध क्षेत्रों की व्यापक जानकारी होती है। अपने इस उच्च ज्ञान के आधार पर उसे नये परिवर्तनों के लिए भूमिका तैयार करनी चाहिए, उन्हें प्रारम्भ करना चाहिए और उसको नियंत्रित करना चाहिए जिससे ये परिवर्तन सही दिशा की ओर हो सकें।
8. शिक्षक को समाज में होने वाले नवीन परिवर्तनों की जानकारी लोगों को देनी चाहिए जिससे सभी लोग उन परिवर्तनों को लाने में सहयोग करें।
9. शिक्षक को बालकों के समक्ष अपने को आदर्श रूप में प्रस्तुत करना चाहिए, जिससे विद्यार्थी उसका अनुकरण करके अपने विचारों को प्रगतिशील बना सकें।
10. शिक्षक को पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों को महत्व देना चाहिए जिससे समाज वैज्ञानिक और तकनीकी दृष्टि से विकास कर सके।
11. शिक्षक को बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना चाहिए जिससे वे नये समाज की संरचना में अपना सहयोग दे सकें।
12. शिक्षक को समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों और समस्याओं से अवगत होना चाहिए तथा इनका समाधान करके समाज में प्रगतिशील मूल्य स्थापित करने चाहिए।
13. शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए कभी–कभी बालकों को कक्षा की सीमा के बाहर भी शिक्षा कार्य करना चाहिए और विविध प्रकार की जानकारी प्रदान करनी चाहिए।
14. शिक्षक को समाज की गतिविधियों और क्रियाकलापों का पूर्ण परिज्ञान होना चाहिए जिससे वह समाज को विचार और क्रिया में नेतृत्व प्रदान कर सके।

शिक्षण से तात्पर्य एक ऐसे त्रिपक्षीय सम्बन्ध (Triadic Relation) अथवा त्रिध्रुवीय प्रक्रिया (Triplar Process) से है, जिसमें शिक्षण के स्रोत (मानवीय और भौतिक), विद्यार्थी और विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए आवश्यक सभी क्रियाओं के प्रारूप और आयोजन पर ध्यान दिया जाता है। **क्लार्के** (Clarke, 1970) के अनुसार **"शिक्षण से तात्पर्य उन क्रियाओं से है जिनकी संरचना और जिनका परिचालन विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है।" थोमस एफ. ग्रीन** (Thomas F. Green, 1971) के अनुसार **"शिक्षण शिक्षक का वह कार्य है जिसे बालक के विकास के लिए किया जाता है।"**

शिक्षक, शिक्षा और समाज के बीच होने वाले ज्ञान की अन्तःप्रक्रिया का सबसे सशक्त केन्द्र बिन्दु है। समाज के अस्तित्व के लिए शिक्षा की आवश्यकता है। समाज शिक्षा के द्वारा ही अपनी विशेषताओं, परम्पराओं, मान्यताओं, संस्कृति, इतिहास आदि को सुरक्षित रखता है। समाज शिक्षा का संगठन करता है, शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करता है। शिक्षा और शिक्षक, दोनों का दायित्व सबल, सशक्त मजबूत राष्ट्र का निर्माण करना होता है। आज के समाज में शिक्षा जीविकोपार्जन के साधन के रूप में सीमित रह गया है तथा नैतिक मूल्य पूर्णतः ह्रास होते जा रहे हैं जो कि अत्यधिक चिन्ता का विषय है। क्योंकि किसी समाज के विकास के लिए मूल्यपरक शिक्षा अनिवार्य है जिसके अभाव में भ्रष्टाचार, आतंक प्रतिद्वन्दिता, नरसंहार, युद्ध, अवसरवाद को बढ़ावा मिलता है। क्योंकि इनके पीछे बुद्धिजीवियों का हाथ होता है। शिक्षा, शिक्षक तथा समाज आपस में जुड़े हेाते हैं।

शिक्षण, शिक्षण कौशलों के रूप में पुकारे जाने वाले विविध कौशलों का एक संगठन है और किसी भी शिक्षण कौशल को विद्यार्थी के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाने हेतु किए जाने वाले विभिन्न शिक्षण कार्यों अथवा व्यवहारों के समूह अथवा संगठन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

शिक्षण कला और विज्ञान दोनों ही है। क्योंकि इसमें प्रतिभा और सृजनात्मकता का प्रयोग किया जाता है तथा इसमें ऐसी तकनीक, तरीकों और कौशलों का समावेश होता है जिनका क्रमबद्ध रूप में अध्ययन करना, वर्णन करना और उनमें सुधार लाना सम्भव होता है। शिक्षण अध्यापक के परिश्रम का परिणाम होता है। यह विभिन्न क्रियाओं की एक संगठित प्रणाली है। इसका वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण और अवलोकन सम्भव है। शिक्षण विभिन्न शिक्षण कौशलों से युक्त एक विशिष्ट कार्य है। यह एक पारस्परिक अन्तःप्रक्रिया है। शिक्षण समाज के भीतर, समाज के लिए और समाज द्वारा संचालित संगठित प्रक्रिया है। समाज और शामिल सदस्यों के विचार, उद्देश्य, कार्य प्रणाली और संगठन में विविधता और निरंतर परिवर्तनशीलता शिक्षण को कोई सरल, सार्वभौतिक और स्थिर रूप प्रदान नहीं कर सकती।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. आर० ए० शर्मा (2011)। *शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार*। मेरठः आर० लाल बुक डिपो।
2. कपिल, एच०के० & सिंह, ममता (2013)। *सांख्यिकी के मूल तत्व*। आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
3. कौल, लोकेश (2012)। *शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली*। नोएडाः विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड।
4. गेरैट, एच०ई० (2000)। *शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग*। लुधियानाः कल्याणी पब्लिशर्स।
5. पलोड़, सुनिता & लाल, आर०बी० (2008)। *शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग*। मेरठः आर०लाल बुक डिपो।
6. पाण्डेय, आर0 (2012)। उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक। आगराः श्री विनोद पुस्तक मन्दिर।
7. बैस्ट, जे० डब्ल्यू० (2011)। *रिसर्च इन एजुकेशन* । नई दिल्लीः पी०एच०आई० लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
8. राय, पी० & राय, सी० पी० (2012)। *अनुसंधान परिचय* । आगराः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
9. Aggarwal, J. C. (1981). *Theory and principles of Education*. New Delhi: Vikas Publishing House PVT LTD.
10. Best, J. W., & Kahn, J. V. (2014). *Research in education*. Delhi: PHI Learning Private Limited.
11. Dhoundiyal, N.C. et. al. (1994). *The Indian Girls*. Almora: Shri Almora book depot.
12. Gupta, S. (2005). *Education in emerging India*. Delhi: Shipra publication.
13. Lebra,J.(1984). *Women and work in India:* Continuity and change. New Delhi: Promilla & CO., publishers.
14. Mohanty, J. (1986). *Indian education in the emerging society.* New Delhi: Sterling Publishers private limited.

15. Mukerji, S. N. (1958). *An introduction to Indian Education*. Baroda: Acharya book depot.
16. Seetharamu, A.S. (1989). *Philosophies of Education*. New Delhi: Ashish Publishing House.
17. Singh, R.K. (2010). *Mechanics of research writing*. Bareilly: Prakash book depot.
18. Taneja, V. R. (1986). *Educational Thought and Practice*. New Delhi: Sterling Publishers Private Limited.

वेबसाइट

www.google.com
www.sodhganga.inflibnet.ac.in